किनसे मिलकर बनती है स्कूल की संस्कृति ?

हृदय कान्त दीवान

बच्चों को शिक्षित करने के ज़रूरी हिस्से के तौर पर उनमें अवधारणाओं से जुड़े ज्ञान और संज्ञानात्मक क़ाबिलियत को बढ़ाना स्कूल की भूमिकाओं में शामिल है। इसके साथ ही, समाज के लिए अहमियत रखने वाले रवैयों, रुझानों और उसूलों को बच्चों में विकसित करना भी स्कूल के सरोकारों का हिस्सा है। आदर्श रूप में कहें तो, सामाजिक जीवन में जानकारियों के साथ अपनी पसन्द तय करने और सकारात्मक योगदान देने के लिए, ऊपर दिए गए सभी पहलुओं के साथ शिक्षा की ज़रूरत है। न सिर्फ़ व्यक्ति की अपनी तरक़्क़ी और क़ामयाबी के लिए बल्कि सबके हित में इन योगदानों की ज़रूरत है। स्कूल, बच्चों को जानने की ख़्वाहिश रखने वाले, ख़ुद में यक़ीन करने वाले, और सीखने के उत्साह से भरे विद्यार्थी तो बनाएँ ही, साथ ही यह तय करने की पुरज़ोर कोशिश करें कि उनका विकास ऐसा हो जिससे कि वे समाज में बन्धुत्व की भावना को बढ़ाने में मददगार बनें। ज़्यादातर स्कूलों में समावेशन और संज्ञानात्मक क्षेत्रों में श्रेष्ठता के उनके घोषित मक़सद के साथ इस पर काम किया भी जाता है। हालाँकि, इन पहलुओं में जो सफलता हासिल होती है, वह स्कूल-दर-स्कूल अलग-अलग होती है।

> मैंने राज्य सरकारों के स्कूलों के साथ काम किया है और उनके कामकाज में बहुत फ़र्क़ देखा है। यह फ़र्क़ अब भी मौजूद हैं। मेरे लिए सबसे ताज्जुब की बात यह थी कि एक ही इलाक़े में (एक-दूसरे से सटे गाँवों में) स्कूलों और शिक्षकों के काम करने का ढंग अलग-अलग था। इसके साथ ही, किसी शिक्षक का पहले काम ठीक न भी रहा हो, लेकिन अच्छी तरह से काम करने वाले किसी स्कूल में आने पर वे सार्थक ढंग से पढ़ाना और बच्चों, समुदाय और बाक़ी शिक्षकों के साथ जुड़ना शुरू कर देते थे। वहीं, जिन शिक्षकों की बहुत तारीफ़ सुनी हो, वे ठीक तरह से काम नहीं करने वाले किसी स्कूल में तबादला होने पर उस स्कूल के बाक़ी शिक्षकों की तरह काम करने लग जाते थे। स्कूलों के बारे में कुछ तो ऐसा था, जिसकी वजह से शिक्षकों के काम करने का ढंग बदल जाता था।

हम स्कूलों में घूमने पर, स्कूल के माहौल में उनके संचालन के कुछ पहलुओं को महसूस कर सकते हैं। कुछ स्कूलों में हम लोगों को मुस्कराते हुए देखते हैं, जो ऊर्जा से भरे उद्देश्यपूर्ण ढंग से अपने काम में लगे होते हैं, कहीं-कहीं छोटे समूहों में लोग चर्चाओं में शामिल होते हैं, या शोर-ग़ुल के बिना अपने-अपने काम में या मिलकर कुछ और करने में तल्लीन होते हैं; ऐसे माहौल में हँसी और चर्चाओं की आवाज़ें होती हैं मगर हो-हल्ला नहीं होता है, बहस-मुबाहिसा होता है पर एक-दूसरे पर चीख़ना-चिल्लाना नहीं होता है। मुझे ऐसे स्कूल याद हैं, जहाँ खेल के मैदान पर क्लास-टीचर और विद्यार्थी दोनों मौजूद थे। इनमें भी वे स्कूल ख़ासतौर पर याद हैं जहाँ शिक्षक महज़ वहाँ खड़े हुए, या बच्चों की निगरानी करते हुए, या उन्हें खेल खेलने के तरीके (कोचिंग) के निर्देश देते हुए मौजूद नहीं थे, बल्कि शिक्षक भी अपने विद्यार्थियों के साथ उन्हीं की तरह बतौर खिलाड़ी खेल रहे थे – वे भी सामने वाली टीम के खिलाड़ियों के पीछे दौड़ रहे थे और खिलाड़ी छात्र-छात्राएँ भी उनके पीछे दौड़ रहे थे। ऐसे माहौल में, हम शिक्षकों और बच्चों के बीच के रिश्तों को, और ख़ुद शिक्षकों में और बच्चों में मौजूद रिश्तों को महसूस कर सकते हैं, जो ऐसी परस्परता को मुमकिन बनाते हैं। ऐसे स्कूलों में शिक्षक अपने काम के बारे में जज़्बे के साथ और पेशेवराना ढंग से बात करते हैं। और अपने काम को गम्भीरता से लेने के बावजूद शिक्षक और विद्यार्थी दोनों ही तनाव में न होकर ख़ुश और आत्मविश्वासी लगते हैं। हमें महसूस होता है कि सभी को मालूम है कि वे यहाँ क्यों हैं, क्या करने के लिए हैं। विद्यार्थी और स्टाफ़ एक महत्त्वपूर्ण उद्यम में बराबर के साझीदारों की तरह एक-दूसरे का सम्मान करते हैं। संक्षेप में कहें तो, किसी भी स्कूल को ऐसे सुरक्षित और सबकी परवाह करने वाले माहौल की ज़रूरत है, जहाँ विद्यार्थियों को महसूस हो कि उनकी मौजूदगी ख़ुशी का सबब है और जहाँ उनकी क़द्र है; यह ऐसा सामाजिकता का माहौल है जिसमें विद्यार्थियों और उनके शिक्षकों दोनों में स्कूल अपना होने और स्कूल के साझीदार होने का एहसास होता है।

मैंने देखा है कि कक्षा को और काग़ज़ी कामकाज को सम्हालने में उलझे शिक्षक बड़ी कक्षाओं के बच्चों को छोटी कक्षाओं को 'मॉनिटर' करने में लगा देते हैं। ये बच्चे बेंत लेकर निगरानी करते हैं और छोटे बच्चों को 'अनुशासित' करने के लिए बेंत का इस्तेमाल करने में भी हिचकिचाते नहीं हैं। ऐसे स्कूलों की कक्षाओं में ख़ामोशी तो पाई जाती है, लेकिन वे बच्चों में इस धारणा के बीज बो देते हैं कि दूसरों को क़ाबू में करके और बन्दिशें लगाकर ही अनुशासन क़ायम किया जा सकता है।

जब कोई स्कूल बातचीत, आपसी व्यवहार और गतिविधियों के सम्बन्ध में बच्चों पर इस तरह से बन्दिशें लगाता है, तो वह उन्हें यह समझाने का मौक़ा गँवा देता है कि एक ओर अर्थपूर्ण और उपयोगी जुड़ाव बनाने और शान्ति क़ायम रखने में, व दूसरी ओर अव्यवस्था और शोर-शराबा करने में क्या फ़र्क़ है।

हालाँकि, इसका जवाब देना आसान नहीं है कि कोई स्कूल जैसा है वैसा ही क्यों है, और वह क्या है जो उस स्कूल की संस्कृति के भाव को वैसा बनाता है, फिर भी हम इस संस्कृति को बनाने वाले कुछ तत्त्वों की पहचान कर सकते हैं – यानी स्कूल की सकारात्मक संस्कृति को कैसे विकसित किया जा सकता है, इसकी कुछ मुख्य विशेषताएँ क्या हैं, और ऐसी संस्कृति को क़ायम रखने की चुनौतियाँ क्या हैं।

संस्कृति के मुख्य तत्त्व

किसी भी सकारात्मक संस्कृति के मुख्य तत्त्वों में से एक है कि **बच्चों को इस तरह से सकारात्मक प्रोत्साहन देना जो उन्हें सीखने में मददगार साबित हो**। सीखने के नज़रिए से बात करें तो, स्कूल को यह यक़ीन होना चाहिए कि सभी बच्चे सीखने की क़ाबिलियत रखते हैं, और वे तब सबसे अच्छी तरह से सीख पाते हैं जब उन्हें प्रोत्साहित किया जाए और उनमें सीखने के प्रति जोश भरा जाए, न कि डाँटा-फटकारा जाए या सज़ा दी जाए।

स्कूल की संस्कृति का एक और तत्त्व इस बात में नज़र आता है कि **स्कूल सीखने को क्या मानते हैं**। मसलन, 'राष्ट्रीय शिक्षा नीति (एनईपी), 2020' के पूर्वगामी और काफ़ी विस्तृत 'प्रारूप राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 2019' में कहा गया है, "सभी अवस्थाओं में शिक्षाक्रम और शिक्षण-शास्त्र में जो भी सुधार प्रस्तावित किए जा रहे हैं उनका एक ही मूल उद्देश्य है कि पूरी शिक्षा-व्यवस्था को इस तरह पुनर्गठित किया जाए कि यह रटने की ओर ले जाने के बजाय बच्चों को कैसे सीखा जाए या सिखाने में सक्षम बने। उद्देश्य यह है कि विद्यार्थियों में 21वीं सदी के लिए ज़रूरी हुनर, कौशल, ज्ञान और मूल्य विकसित किए जाएँ और साथ-ही-साथ वे एक समग्र और पूर्ण व्यक्ति के रूप में विकसित हों। इन उद्देश्यों की पूर्ति के लिए शिक्षाक्रम और शिक्षण-शास्त्र को पूर्ण रूप से बदला और पुनर्गठित किया जाएगा" (बिन्दु 4.2; अँग्रेज़ी प्रारूप में पृष्ठ 76)। इसलिए, स्कूल में बच्चों को सीखने और समझने में मददगार संस्कृति होनी चाहिए, न कि उन्हें सीखने के शॉर्टकट उपलब्ध करा दिए जाएँ। बौद्धिक माहौल ऐसा होना चाहिए कि बच्चों से यह उम्मीद की जाए कि वे कोशिश करके सीखेंगे और सभी बच्चों को अपनी बेहतरीन कोशिश करने में मदद की जाए और उनके सामने ऐसा करने की चुनौती भी पेश की जाए। वे इस तरह सीखें कि वह उनके लिए ज़िन्दगी भर सीखने की प्रक्रिया का हिस्सा बन जाए, न कि यह बस वक़्ती तौर पर दिखावे भर के लिए हो। ऐसा मुमकिन हो, इसके लिए स्कूलों में नया जानने की ललक, खोज-बीन और सीखने की संस्कृति होना ज़रूरी है, और यह आवश्यक है कि शिक्षक इसका हिस्सा हों।

इस तरह, स्कूल की संस्कृति का तीसरा मुख्य तत्त्व यह बनता है कि **शिक्षक भी सीखने के लिए बहुत रुझान दिखाएँ**। अगर कक्षा में बताई बातें और शिक्षकों की बताई किताबें बच्चों में दिलचस्पी जगाती हैं तो वे पुस्तकालय में उमड़ पड़ेंगे। किसी स्कूल में बच्चों से उम्मीदें तब ही की जा सकती हैं जब वैसा ही आचरण स्कूल के सभी सदस्यों में दिखाई देता हो। इसलिए, विद्यार्थियों से ऊँची उम्मीदों के साथ स्नेह भरे परवरिश के माहौल के लिए स्कूल को वैसा ही माहौल शिक्षकों को भी देना चाहिए।

एक और ज़रूरी तत्त्व स्कूल की संरचनाएँ हैं, जो उसके कार्मिकों और छात्र-छात्राओं को स्कूल में उनकी **आवाज़ और साझा ज़िम्मेदारी** देती हैं। स्कूल में सभी को यह महसूस होना चाहिए कि यह स्कूल उनका अपना है। इसकी ज़िम्मेदारी स्कूल के नेतृत्व की है। इस जज़्बे को ऐसे मंचों के ज़रिए हक़ीक़त में ढाला जाना चाहिए, जो कामकाज में सबकी स्पष्ट भूमिकाएँ और एक-दूसरे की ज़िम्मेदारियों की समझ को सुनिश्चित करें। ऐसा इस तरह से किया जाए, जिसमें हर एक को यह एहसास हो कि वे स्कूल के माहौल पर असर डालने वाले फ़ैसले लेने और समस्याओं का समाधान करने में हिस्सेदार हैं। फ़ैसले लेने और लागू करने में शिक्षकों को जो अहमियत और स्वायत्तता दी जाती है, उसका बहुत असर इस बात पर होता है कि स्कूल के विद्यार्थी और स्कूल से जुड़े बाक़ी लोग स्कूल को किस तरह से देखते हैं।

इसके साथ ही मेल-मिलाप की संस्कृति बनाने में एक और बुनियादी तत्त्व सभी शिक्षकों सहित स्कूल के नेतृत्व का **रोल मॉडल** की तरह काम करना है। स्कूल के प्राचार्य को शिक्षकों से दोस्ताना होना चाहिए और उनके बीच फ़ासला कम होना चाहिए, लेकिन साथ ही व्यक्तिगत और पेशेवर रिश्तों में ज़रूरी दूरी भी बनाए रखनी चाहिए। यह वही सन्तुलन है जो शिक्षकों को विद्यार्थियों के साथ बनाए रखना ज़रूरी है – शिक्षक, विद्यार्थियों के दोस्त रहें लेकिन यह न भूलें कि वे अपने विद्यार्थियों के रोल मॉडल भी हैं। पढ़ाने वाले और पढ़ने वाले के बीच होने वाले संवाद के अलावा खेलों, कलाओं और क्राफ़्ट में भागीदारी के ज़रिए शिक्षकों और विद्यार्थियों में आदान-प्रदान को बढ़ावा दिया जाना चाहिए। विद्यार्थियों के साथ समानता की भावना होने, और साथ ही उनकी परवाह करते हुए अपनी छत्र-छाया देने से छात्र-छात्राओं में आत्मविश्वास और निष्पक्ष व्यवहार की भावना पैदा होती है, जैसा कि खेल के मैदान में भी होता है। इसी तरह, नृत्य और

गायन में अगर शिक्षक ख़ुद भागीदार नहीं बनते हैं तो बच्चे में यह धारणा घर कर जाती है कि इन कलाओं में वही हिस्सा ले सकते हैं जो इनमें पारंगत हों। इस प्रकार की झिझक को दूर करने के लिए ऐसी संस्कृति की ज़रूरत है, जहाँ सभी से यह उम्मीद की जाती हो कि वे किसी संकोच के बिना हिस्सा लेंगे और उनके लिए ऐसे अवसर भी मौजूद हों।

एक-दूसरे की इज़्ज़त करने और लिहाज़ रखने की भावना से बच्चों में यह भरोसा जगता है कि वे शिक्षकों से ऐसे मुद्दों पर भी बात कर सकते हैं जो जटिल हों और जिन पर बात करना आसान न हो। एक-दूसरे को सम्बोधित करने के ढंग का बहुत असर इस बात पर पड़ता है कि आपसी संवाद कैसा होगा और लोग एक-दूसरे को किस नज़र से देखेंगे। इसलिए, लोगों के रिश्तों और व्यवहारों के लिए ऐसे मानदण्ड बनाए जाने चाहिए जो दूसरों के एहसास और नज़रियों को समझने, परवाह करने, उत्कृष्टता हासिल करने और नैतिक व्यवहार की 'पेशेवर' संस्कृति बनाने में मददगार हों। यह बहुत बड़ी चुनौती है क्योंकि शिक्षकों और विद्यार्थियों दोनों में रिश्तों से उम्मीदों और अपने समुदाय के बारे में धारणाओं की साँस्कृतिक और सामाजिक समझ पहले से बनी-बनाई होती है। इस लिहाज़ से, विविध पृष्ठभूमियों से आने वाले लोगों की इस मिलन स्थली, यानी स्कूल, में सबसे ज़रूरी कारक आलोचना और सुझावों को निष्पक्ष रूप से लेने और समझने की लोगों की क्षमता है। इस तरह की प्रक्रिया के लिए सब्र और समझदारी की ज़रूरत होती है, ऐसा ख़ासतौर पर उन लोगों से अपेक्षित है जो अधिकार-सम्पन्न पदों पर हैं और नेतृत्व करने वाले हैं।

नीतिगत वक्तव्यों पर एक नज़र

समुदाय और सरकारें मानती हैं कि शिक्षा का सबसे ज़रूरी काम बच्चों के मन में ऐसी नैतिकताएँ क़ायम करना है जो समाज के जारी रहने और तरक़्क़ी करने को बढ़ावा देती हैं। विद्यार्थी का मूल्यांकन और रैंक चाहे जैसा भी हो, यह उम्मीद तो बनी रहती है कि तालीम उस व्यक्ति को 'सुसंस्कृत' बनाएगी। ये अपेक्षाएँ पाठ्यचर्या से जुड़े दस्तावेज़ों में साफ़तौर पर बताई गई हैं, और शिक्षकों के लिए दिशा-निर्देशों एवं नियमावलियों में इनकी झलक मिलती है।

नीतिगत दस्तावेज़ों में स्कूल के माहौल और विद्यार्थी उसे किस तरह से लेते हैं इस पर फ़िक्र ज़ाहिर की जाती रही है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 2020 सबको शामिल करने वाले माहौल और परवाह करने वाली संस्कृति की ज़रूरत पर ज़ोर देती है, जो उत्कृष्टता हासिल करने, नया जानने की ललक पैदा करने, दूसरों के एहसास और नज़रियों को समझने और समता को बढ़ावा देती हो। यह बच्चों में संवैधानिक और सकारात्मक भारतीय मूल्यों का विकास करने पर भी ज़ोर देती है, जिसे शिक्षकों को भी अपने काम में महसूस करना लाज़मी है।

एनईपी 2020 में (और एनसीएफ़ 2005 में भी) ऐसी संस्कृति बनाने के लिए सक्रिय कोशिश करने का ज़िक्र है, जिसका लम्बे समय तक विकासात्मक असर हो। साथ ही यह दलील भी पेश की गई है कि '18 वर्ष का युवा किसी सुहानी सुबह उठकर अचानक यह नहीं जान सकता कि उसे प्रजातंत्र में भाग लेना है, उसका संरक्षण करना है, उसे बढ़ावा देना है, विशेषकर तब, जब उसको पहले से इसका कोई अनुभव न हो, न ही उसके सामने इसके लिए कोई आदर्श हों।' एनसीएफ़ 2005, एनईपी 2020 और एनसीएफ़-एसई 2023 के मुताबिक़, स्कूलों को अपने यहाँ ऐसी संस्कृति सुनिश्चित करनी चाहिए जो विद्यार्थियों को लोकतंत्र, बन्धुता, बहुलता और समता के मूल्यों का अनुभव दे। इसके लिए माता-पिता और समुदाय के साथ भी बात और काम करने की ज़रूरत होगी, जिससे बच्चों के लिए ये मूल्य उनके घर के अनुभवों का हिस्सा बन पाएँ।

इसके अलावा, नीतिगत दस्तावेज़ों ने नया जानने और समझने, उचित वजह और साक्ष्य की तलाश करने के साथ ही खुली सोच रखने, नए तरीक़े ईजाद करने और अमल में लाने की संस्कृति बनाने की सिफ़ारिश की है। ये दस्तावेज़ बच्चों में गणित का डर घर कर जाने से बचाने; बहुभाषीय बातचीत होने देने; और बच्चे अपने समुदाय से जो भाषा, संस्कृति और ज्ञान लेकर आते हैं उसका एहतराम करने और इनके ज़रिए उनके साथ बात और काम करने की सिफ़ारिश भी करते हैं।

इन दस्तावेज़ों में सलाह दी गई है कि स्कूल में परवाह करने वाला और स्नेह भरी परवरिश का माहौल होना चाहिए। एनईपी 2000 में शिक्षकों पर अध्याय में कहा गया है कि 'यह सुनिश्चित करने के लिए कि स्कूल में सीखने के लिए सकारात्मक वातावरण हो, प्रधानाचार्यों और शिक्षकों की अपेक्षित भूमिका में यह स्पष्ट रूप से शामिल होगा कि वे अपने स्कूलों में प्रभावी अधिगम और सभी हितधारकों के लाभार्थ एक संवेदनशील और समावेशी संस्कृति का निर्माण करें' (एनईपी 2020 फ़ाइनल 5.13। अँग्रेज़ी पृष्ठ 21)। प्रारूप (एनईपी 2019) के अनुसार 'जिन स्कूलों में शिक्षक काम करते हैं, वहाँ पर संवेदनशीलता, सहयोग की भावना, और समावेशी संस्कृति होनी चाहिए। यह उत्कृष्टता, जिज्ञासा, समानुभूति और समता को प्रोत्साहित करती है। स्कूल संस्कृति का विकास प्रधानाचार्यों, स्कूल कॉम्प्लैक्स के प्रधान, एसएमसी और स्कूल कॉम्प्लैक्स मैनेजमैण्ट कमेटी (एससीएमसी) को मिलकर करना चाहिए' (एनईपी ड्राफ़्ट 2019, अध्याय-5 शिक्षक, अँग्रेज़ी पृष्ठ 114)। ड्राफ़्ट एनईपी आगे यह भी कहती है कि 'यह सुनिश्चित करने के लिए कि स्कूल में सीखने के लिए सकारात्मक माहौल हो, और बच्चे अधिक प्रभावी ढंग से सीखें, प्रधानाचार्यों और शिक्षकों की अपेक्षित भूमिका में

यह स्पष्ट रूप से शामिल होगा कि वे स्कूल में एक संवेदनशील और समावेशी संस्कृति का निर्माण करें' (एनईपी ड्राफ़्ट 2019, अध्याय-5 शिक्षक, अँग्रेज़ी पृष्ठ 118)।

शिक्षा का अधिकार अधिनियम 2009 (आरटीई) में भी स्कूल का सकारात्मक माहौल विकसित करने की बात की गई, और यह कहा गया कि 'किसी भी बच्चे को शारीरिक दण्ड नहीं दिया जाएगा या उसका मानसिक उत्पीड़न नहीं किया जाएगा।' इसके लिए स्कूल का नेतृत्व करने वालों को स्कूल को बच्चों के लिए माक़ूल और तनावमुक्त जगह बनाने पर ध्यान केन्द्रित करना होगा, जहाँ कक्षा का माहौल सीखने वालों के मुताबिक़ हो। ऐसा स्कूल बनाने के लिए अनुशासन, दण्ड और विद्यार्थियों व शिक्षकों के बीच रिश्तों से जुड़ी धारणाओं को फिर से परिभाषित करने की ज़रूरत है।

स्कूलों में बुनियादी बदलाव की किसी भी प्रक्रिया को सकारात्मक तथा सबको साथ लेकर चलने की संस्कृति और परम्परा का विकास करने की प्रक्रिया के ज़रिए आगे बढ़ाना चाहिए। यह सफ़र आसान नहीं है और, जैसा कि कहा गया है, इसमें शामिल लोगों की धारणाओं तथा समुदायों की और शिक्षकों की अब तक की परम्पराओं से इसे प्रतिरोध का सामना भी करना पड़ रहा है।

हृदय कान्त दीवान शिक्षा के क्षेत्र में अलग-अलग ज़िम्मेदारियों के साथ 40 साल से ज़्यादा वक़्त से काम कर रहे हैं। वे वर्तमान में अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय के साथ कार्यरत हैं। वे एकलव्य के संस्थापक सदस्य हैं, और विद्या भवन सोसायटी, उदयपुर के शैक्षिक सलाहकार रहे हैं। वे शिक्षा में नवाचार और राज्यों के शैक्षिक ढाँचों एवं शिक्षा सम्बन्धी सामग्री में बदलाव की कोशिशों से जुड़े रहे हैं। उनसे hardy@azimpremjifoundation.org पर सम्पर्क किया जा सकता है।

अनुवाद : हिमालय तहसीन **पुनरीक्षण :** प्रतिका गुप्ता